• कथा माला 9
अन्ताक्षरी
• तीन बच्चे

तीन बच्चे

मेरे बच्चों में से प्रत्येक ने अपने लिए एक-एक बगीचा लगाया था। बगीचा क्या फूलों की छोटी-छोटी क्यारियाँ थीं। एक दिन सबेरे हम लोगों ने देखा कि उन क्यारियों में फूल खिल आये हैं।

बच्चे ही तो ठहरे। हर एक को अपनी-अपनी क्यारी के फूल अधिक सुन्दर जान पड़े — और इसी बात पर उन लोगों में लड़ाई छिड़ गयी। हर एक का कहना था कि उसकी क्यारी के फूल सबसे सुन्दर हैं।

बात बढ़ते-बढ़ते फूलों से हटकर दूसरे ही क्षेत्र में जा पहुँची। एक हिटलर बना, तो दूसरा मुसोलिनी और तीसरा स्टालिन। और मुझे इन तीनों की माँ बनने का सौभाग्य एक साथ ही प्राप्त हो गया।

संग्राम में विषैले वाक्यों का प्रयोग होते सुनकर, मुझे चौके का काम छोड़कर, बगीचे की ओर जाना पड़ा। मुझे देखते ही सब एक साथ, अपने-अपने पक्ष का समर्थन कर, न्याय की दुहाई देने लगे। न्याय का कार्य उतना आसान न था, जितना कि एक अदालत के जज का होता है। जज के पथ-प्रदर्शन के लिए कानून होते हैं और नज़ीरें भी। चाहे लकीर की फकीरी में अन्याय ही क्यों न हो जाय, पर उनका मार्ग स्पष्ट रहता है। मेरे सामने न नज़ीर थी न क़ानून — फिर भी मुझे यह लड़ाई समाप्त करनी थी — और न्यायपूर्वक।

मैं सोच ही रही थी कि निर्णय करने के लिए जूरी क्यों न नियत कर लिए जायें कि इतने में ही बच्चों के काकाजी आते दिखायी दिये। चीखना-चिल्लाना तो दूर, उन्हें किसी का पंचम स्वर के ऊपर बोलना तक पसंद नहीं है। बच्चों को लड़ते देखकर बोले — अच्छा यह लड़ाई किसलिए है? यदि तुम लोग लड़े-भिड़े तो मैं तुम्हारी माँ को सत्याग्रह न करने दूँगा।

मेरे हिटलर-मुसोलिनी शांत हो गये। माँ के बिना जिन्हें स्कूल जाने तक में कष्ट होता है, माँ के बिना जिनका काम नहीं हो सकता वही मेरे बच्चे चाहते थे कि मैं सत्याग्रह करूँ और जेल जाऊँ।

अब मैंने उनसे पूछा कि कोई शिकायत तो नहीं है, तो सब एक स्वर में बोल उठे — नहीं माँ, सभी क्यारियों के फूल सुन्दर हैं। तुम सत्याग्रह करो और जल्दी जेल जाओ।

हम सब भीतर जाने को थे ही कि बाहर से गाने की आवाज आयी — गाना कोरस में था और स्वर था बच्चों का-सा।

भगवान दया करना इतनी,
मोरी नैया को पार लगा देना।

और अब तो हम सब दरवाजे की ओर दौड़ पड़े। इसी समय दूसरा पद सुनाई पड़ा —

मैं तो डूबत हूँ मँझदार पड़ी,
मोरी बैंया पकड़के उठा लेना।

बाहर आकर देखा — तीन बच्चे थे, दो लड़कियाँ और एक लड़का। बड़ी लड़की होगी दस बरस की; छोटी आठ और सात के बीच में थी और लड़का, वह बड़ी की ही गोद में था — कोई तीन साल का। हम लोगों को देखते ही उन लोगों ने गाना बन्द कर दिया। लड़के को गोद से उतारकर, बड़ी ने जमीन से माथा टेककर हमें प्रणाम किया। उसकी देखा-देखी छोटी लड़की और लड़के ने भी जमीन से माथा टेका और तीनों ने अपने चीथड़ों में छिपे हुए पेट को दिखाकर यह बताया कि वे भूखे हैं। बड़ी के हाथ में एक झोली थी और छोटी के हाथ में टीन का डिब्बा। उन्होंने एक बार झोली की ओर देखा जो बिलकुल खाली जान पड़ती थी फिर हमारी ओर याचना की दृष्टि से देखने लगे। मैंने उनसे कहा — तुम गाती तो बहुत अच्छा हो और भी कोई गाना जानती हो!

बड़ी के बोलने के पहिले ही छोटी बोल उठी — हमें भजन भी आते हैं, बड़ी मालकिन! — और आदेश पाये बिना ही वे दोनों गाने लगीं —

'कमर कस ले रे बिलोची, तेरे संग चलूँगी।
तेरे संग चलूँगी रे तेरे संग चलूँगी।।'

कमर कस ले.....
मेरे साथ चलेगी तो तेरी अम्माँ लड़ेगी....।'

हम लोगों की हँसी अब दबाये न दबी। अम्मां के लड़ने की बात सुनते ही वह फूट पड़ी। वे सभी शर्माकर चुप हो गये। उनकी दृष्टि से ऐसा जान पड़ता था कि वे किसी अज्ञात भूल से दुखी हो गये हैं। मैंने हँसी रोककर आश्वासन के रूप में कहा — बहुत अच्छा गाया। मेरी बात सुनते ही वे फिर बैठकर लगे जमीन से माथा टेकने। मैंने पूछा — तुम्हें क्या चाहिए, पका हुआ खाना या कच्चा?

बड़ी ने फिर जमीन से माथा टेककर कहा — कुछ भी खाने को चाहिए बड़ी मालकिन। कल से कुछ नहीं खाया है। मैंने बच्चों से कहा कि इन्हें दो-दो पूरियाँ लाकर दे दो, और मैं अन्दर चली गयी।

बच्चों ने उन्हें कितनी पूरियाँ दीं, यह तो मैं नहीं कह सकती, पर जब चौके में जाकर देखा तो न डिब्बे में एक भी पूरी थी और न कटोरे में तरकारी।

दूसरे दिन हम लोग सुबह की चाय पीकर उठने ही वाले थे वे बाल गवैये फिर आ पहुँचे। हमें, कोमल स्वर में सुनाई पड़ा —

'साँवरिया हमें भूल गयो, सखि, साँवरिया।
बिंदराबन की कुञ्जगलिन में बाज रही है बासुरिया।।
हमें भूल गयो, सखि साँवरिया।।'

मैंने अपने बच्चों से कहा — कल तुमने इन्हें खूब पूरियाँ खिलायी थीं न। अब वे सब फिर आ गये। जैसे उनके लिए यहाँ रोज पूरियाँ धरी हैं!

— धरी तो हैं माँ! एक साथ ही बच्चों के मुँह से निकला और सबके हाथ एक साथ ही पूरी के डिब्बे की ओर बढ़े।

मैंने उन्हें रोकते हुए कहा — ठहरो, ठहरो! रोज-रोज इन्हें पूरियाँ खिलाओगे तो वे दरवाजा ही न छोड़ेंगे। उन्हें चावल या आटा देकर जाने को कह दो।

एक बच्चा बोल उठा — बेचारे छोटे-छोटे बच्चे; न जाने उनके माँ भी है या नहीं। वे भला कहाँ पकायेंगे?

दूसरा ताने के स्वर में बोला — इससे अच्छा तो उन्हें कुछ भी न दिया जाय।

सबसे छोटा बोला — तुम भी माँ होकर ऐसा क्यों कहती हो माँ। उन बेचारों को भी भूख लगी होगी। हमारे हिस्से की ही दे दो।

लड़की सब में समझदार थी। उसकी दृष्टि यही चाह रही थी कि माँ का इशारा भर मिले और पूरियों का डिब्बा ले जाकर वह पूरियाँ उन बच्चों को खिला दे।

मैंने उदासीनता से कहा — पूरियाँ ही दे दो, पर शाम को फिर तुम्हारे लिए नाश्ता बनाना पड़ेगा।

'माँ, शाम को नाश्ता नहीं करेंगे,' एक स्वर में एक साथ बच्चों ने कहा और हाथ में पूरियाँ लिए हुए दरवाजे की ओर दौड़े।

चौके का काम निपटाकर मैं बाहर गयी। देखा वे तीनों बड़े मजे में पूरियाँ खा रहे थे और मेरे बच्चे भी बड़े उत्साह से उन्हें परस रहे थे। जब वे खा-पीकर उठे तो मैंने कहा — देखो भाई! तुमने पूरियाँ खा लीं। अब बिना गाना सुनाये

न जाने पाओगे। उन्होंने कृतज्ञतापूर्वक माथा जमीन पर टेककर गाना शुरू किया —

'अब न रहूँगी कान्हा, तोरी नगरिया।
हाट-बाट मेरी गैल न छोड़े,
पनघट पर मोरी फोरे गगरिया।
अब न रहूँगी.....,.....।'

गाना गा चुकने के बाद उन्होंने जमीन पर माथा टेका, जैसे हमें आशीर्वाद देकर जाने के लिए उद्यत हों, पर मैंने उन्हें रोककर पूछा — क्या तुम तीनों भाई-बहिन हो?

— हाँ, बड़ी मालकिन — बड़ी लड़की ने कहा।

मैंने पूछा — तुम्हारा नाम क्या है? अपना नाम उसने 'ईठी', छोटी बहिन का नाम 'सीठी' और भाई का नाम 'प्रेमा' बतलाया।

ईठी, सीठी, प्रेमा उनका नाम दुहराते हुए मैंने पूछा — क्या तुम्हारे माँ-बाप

कोई नहीं है। तुम कल भी अकेले आये थे, आज भी।

छोटी लड़की बड़ी तत्परता से बोल उठी — माँ भी है और बाप भी है, बड़ी मालकिन — हमारे सब कोई है।

कहाँ हैं तुम्हारे माँ-बाप जो तुम्हें इस तरह अकेले फिरने को भेज देते हैं?

— बाप अमरावती में है और माँ...

— अमरावती में तुम्हारा बाप क्या करता है! मेरा छोटा लड़का बीच में ही पूछ बैठा।

— जेल में है छोटे बाबू — बड़ी लड़की ने उत्तर दिया।

— जेल में है! — मैंने कुछ अनास्था से पूछा — जेल क्यों हुई उसे?

लड़की बोली — वह दारू जो पीता था। और दारू पीकर चुप भी नहीं रहता था। दंगा करता था, माँ को मारता था, गाली बकता था और इसलिए वो...(लड़की आँख उठाकर देखते हुए बोली) बड़ी मालकिन पुलिसवालों ने उसे पकड़ा; और सब लोग कहते हैं पुलिसवालों ने ठीक किया।

— और तुम्हारी माँ, वह अब कहाँ है? — मैंने पूछा।

लड़की बोली — माँ?... वह भी तो जेल में है। और उसी के साथ हमारा सबसे छोटा भाई भी है। वह तो (अपने भाई की ओर उँगली से दिखाकर लड़की ने कहा) प्रेमा से छोटा है। वह रोता नहीं, इससे अच्छा है।

बेचारे बच्चे — मेरे मुँह से निकल पड़ा — माँ-बाप दोनों जेल में और ये अनाथ सड़क पर भीख माँगते फिरते हैं।

मैंने फिर पूछा — तुम्हारी माँ ने क्या किया था?

लड़की बोली — हमारी माँ ने पुलिसवाले को मारा था — जिसने हमारे बाप को पकड़ा था न, उसी को। और फिर वे माँ को भी पकड़ ले गये। माँ के बिना हमको बुरा लगता है पर यह प्रेमा तो रात-दिन रोता ही रहता है।

मैंने लड़के की ओर देखा — बेचारा छोटा-सा बच्चा; मुश्किल से तीन बरस का, फटे चीथड़ों में लिपटा हुआ; सिर में महीनों तेल का नाम नहीं; रूखे, बिखरे बाल, न जाने कब से नहाया नहीं था, शरीर पर एक मैल की

तह-सी जम गयी थी; गाल पर आँसुओं के निशान जमे हुए थे, आँसुओं के साथ-साथ उस स्थान की मैल जो धुल गयी थी। मुझे उस बच्चे पर बड़ी दया आयी।

मैंने उस लड़की से पूछा — तुम लोग अपनी माँ से जेल में मिलने नहीं जातीं?

छोटी बोल उठी — जाती हैं बड़ी मालकिन।

बड़ी ने कहा — तीन महीने में एक बार मुलाकात होती है। एक बार मुलाकात करने गये थे, दूसरी बार तीन महीने के बाद जब हम लोग गये तो मालूम हुआ कि माँ को यहाँ के जेल भेज दिया है। तो हम लोग सब, काली माँ के साथ यहाँ चले आये। काली माँ भी भीख माँगती है।

— तुम लोग रात को कहाँ रहती हो? सोती कहाँ हो? तुम्हें डर नहीं लगता? — मैंने पूछा।

बड़ी लड़की ने कहा — जेल के पास एक नाला है। हम लोग रात को वहीं पुल के नीचे माँ की बातें करते-करते सो जाते हैं। कभी-कभी काली माँ भी आ जाती है पर वह रोज नहीं आती।

— माँ की सजा कितने दिन की है?

— दो साल की — बड़ी लड़की ने कहा — हम रोज जेल को देखते हैं। हमारी माँ वहीं तो है। जब माँ छूटेगी हम उसको साथ लेकर देश जायेंगे। एक प्रकार की खुशी से बालिका पुलकित हो उठी। अपनी माँ को जैसे लेकर वह सचमुच देश जाने की तैयारी कर रही है।

मैंने लड़की से पूछा — तुम लोग नहाते हो कभी? संकोच में बड़ी लड़की चुप रही। छोटी ने कहा — हमारे पास दूसरे कपड़े नहीं हैं न।

मेरा इशारा पाते ही मेरे बच्चों ने अपने पुराने कपड़ों में से बहुत-से कपड़े ला दिये।

मेरा चित्त उदास हो गया। मैं कमरे में बैठकर कुछ सोचने लगी और वे बच्चे कपड़े लेकर खुशी-खुशी चले गये। कुछ दूर से गाने की आवाज आयी —

"मैं तो डूबत हूँ मँझधार पड़ी,

मोरी बैंया पकड़के उठा लेना।''

बहुत से सुन्दर पद पढ़े, लिखे और सुने थे। पर स्वर और आत्मा का ऐसा संयोग तो कहीं नहीं देखा था, शब्द और वस्तु का ऐसा मेल तो कभी चित्रित नहीं हुआ।

मैं उन्हें बुलाने के लिए झपटी पर तब तक वे दूर निकल गये थे।

□

इस घटना के दूसरे ही दिन, मैं भी युद्ध-विरोधी सत्याग्रह करके, जेल की अतिथि बनी, मेरे और बच्चों ने तो हँसी-खुशी बिदायी दी पर सबसे छोटी मिनू, बहुत छोटी होने के कारण, मुझे छोड़कर घर में न रह सकी। अतएव वह मेरे साथ हो गयी।

उस समय जबलपुर जेल में कोई अन्य राजबन्दिनी न थी। अकेले होने के कारण मैं अस्पताल में रखी गयी। मेरी सेवा के लिए दो साधारण स्त्री कैदिनें रात में मेरे साथ रहती थीं। दिन में सब लोग एक साथ रह सकते थे। कैदखाने

की दुनिया भी एक विचित्र वस्तु है।

यह कौन है? चोर!

यह? यह चरस बेचती थी और इसने अपने नवजात शिशु की हत्या करने की चेष्टा की थी। पर माँ होकर वह हत्या कर सकती थी — इसका मुझे विश्वास न हुआ।

और यह लड़की? यह तो अभी बहुत कम उमर है, इसने क्या किया था? इसने अपने पति और सास को जहर दिया था। मैं काँप उठी! विधाता! क्या यह सचमुच स्त्रियाँ हैं? तुम्हारी ही आज्ञा से इनका सृजन हुआ होगा?

किन्तु, इसी समय जैसे कोई अन्दर से बोल उठा — यह तस्वीर का एक ही पहलू है — इसकी दूसरी ओर भी देखो! सम्भव है वे निर्दोष हों, सम्भव है वे देवियाँ हों?

मेरी सेवा के लिए जो दो स्त्रियाँ तैनात थीं, उनमें से एक तो अल्हड़ थी, जिसे कुछ काम-काज न आता था पर दूसरी समझदार थी। वह प्रौढ़ा थी।

पड़ी। मैंने प्रार्थना की, हे ईश्वर सब माताओं के बच्चों को अच्छी तरह रख और सबके बाद मेरे बच्चों की भी रक्षा कर।

□

जेल में मेरे पास अखबार आया करते थे। जेल की सभी कैदी स्त्रियाँ लड़ाई की खबरें सुनने को उत्सुक रहा करती थीं। उन्हें विश्वास था कि एक दिन ऐसा होगा जब जेल के फाटक टूट जायेंगे और अवधि से पहले ही उनका छुटकारा हो जायेगा। मैं भी उन्हें योरप की लड़ाई और भारत के सत्याग्रह की खबरें सुना दिया करती थी।

उस दिन शाम को अखबार आया, और पढ़ते-पढ़ते मेरा जी धक् से रह गया! जबलपुर की ही खबर थी —

'कल रात एकाएक पानी बरसा और खूब बरसा। जेल के पास के नाले में तीन ग़रीब बच्चे बह गये। उन तीनों की लाशें मिली हैं। बहुत खोज करने पर भी उनकी शिनाख्त नहीं हो सकी। दो लड़कियाँ हैं और एक लड़का। ऐसा सुना गया है कि वे गाना गाकर भीख माँगा करते थे।'

मेरे घर पर आकर गानेवाले उन तीन बच्चों का चित्र हठात् मेरी आँखों के सामने खिंच गया और ऐसा जान पड़ा जैसे दूर से कोई गा रहा है —

'मैं तो डूबत हूँ मँझधार पड़ी,
मोरी बैंया पकड़के उठा लेना।'

अख़बार रखकर मैं आँसू रोकने का प्रयत्न करने लगी। अचानक मेरे मुँह से निकल गया — 'बेचारे बच्चे।'

लखिया पास ही बैठी मेरे लिए चाय तैयार कर रही थी। उसने पूछा — क्या खबर है, बाई साहब! अरे, उदास क्यों हो गयीं? बच्चों की याद आ रही है?

मैं उसे कुछ भी उत्तर न दे सकी। वह फिर बोली — थोड़े ही दिन तो और हैं, बाई साहब! कट ही जायेंगे। फिर बच्चे अपने बाप के साथ तो हैं; फिकर क्यों करती हो?

उसकी ओर देखने की मेरी हिम्मत नहीं थी पर मुझे ऐसा जान पड़ा जैसे

उसने बात खतम होते न होते एक गहरी साँस ली और आँखों के आँसू पोंछ लिए। मैंने अपनी सब शक्ति संचित करके उससे पूछा — लखिया, तेरे और बच्चे हैं, या यही एक है?

आँखों में आँसू और ओठों पर एक क्षीण मुस्कराहट के साथ वह बोली — एक ही क्यों बाई साहब, (मेरी बच्ची की ओर इशारा करके) यह बिटिया भी तो है।

मैंने कहा — ये तो जेल के भीतर हैं। जेल के बाहर कितने हैं?

लखिया एक गहरी साँस लेकर बोली — जेल के बाहर बाई साहब, वो तो भगवान् के हैं; अपने कैसे कहूँ?

और इसके बाद वह अखबार की ख़बर पूछती ही रह गयी पर मैं उसे कुछ भी न बतला सकी।

□

मुद्रक : न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, नई दिल्ली :- 110055